ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 **PP. NO.- 292-294**

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-14, No.-III, Issues-21, YEAR- Sept.-2021

पर्यावरणीय बोध का उत्कृष्ट महाकाव्य : कामायनी

डॉ० राम अधार सिंह यादव E-mail: yramadhar64@gmail.com

Received- 22.07.2021, Revised- 25.07.2021, Accepted - 02.08.2021

सारांश : ***आधुनिक युग में कवि के वैयक्तिक विकास और सामाजिक स्वाधीनता की भावना एक ओर तो प्राचीन रूढ़ परम्पराओं के विरोध के कारण जागृत हुई और दूसरी ओर प्रकृति प्रेम के रूप में। अधिकांश स्वच्छन्दतावादी कवियों का मानना है कि कविता करने की प्रेरणा हमें प्रकृति से मिली। भारतीय जनमानस में स्वाधीनता की भावना जागृत करने के लिए छायावादी कवियों ने प्रकृति चित्रण का सहारा लिया। इन्होंने पुरानी रूढ़ियों के घुटन भरे वातावरण से आधुनिक युवक को प्रकृति के खुले वातावरण में लाकर खड़ा कर दिया। प्रकृति के राज्य में उसे पशु, पक्षी, नदी, नालों, हवा, बादल, निर्झर, पर्वत आदि सबके भीतर एक उन्मुक्त और निरंकुश भाव के दर्शन किए। देश प्रेम की शुरूआत प्रकृति प्रेम से ही संभव है।***

कुंजीभूत शब्द—वैयक्तिक विकास, सामसजिक, स्वाधीनता, परम्पराओं।

इस विषय में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने लिखा है; **"यदि किसी को अपने देश से प्रेम है तो उसे अपने देश के मनुष्य, पशु, लता, गुल्म, पत्ते, कण, पर्वत, नदी, निर्झर सबसे प्रेम होगा; सबाके वह चाह भरी दृष्टि से देखेगा। जो यह नहीं जानते कि कोयल किस चिड़िया का नाम है... वे यदि दस बने ठने मित्रों के बीच प्रत्येक भारतवासी की औसत आमदनी का परता बताकर देश प्रेम का दावा करें, तो उनसे पूछना चाहिए कि भाइयों, बिना परिचय का यह प्रेम कैसा?"**[1] छायावादी कवियों का प्रकृति के उन्मुक्त माहौल की ओर भागना स्वाभाविक है क्योंकि वे व्यक्तिगत स्वाधीनता चाहते थे। पारिवारिक व्यवस्था में यदि इस विचार को देखें तो समझ सकते हैं कि जिस प्रकार संयुक्त परिवार में लोगों के बीच उतना सौहार्द नहीं रहता, जितना उसके विघटित होने के पश्चात छोटे छोटे परिवारों की विभिन्न इकाईयों में मिलता है। यही व्यक्तिगत स्वभाव सामाजिकता, स्वाधीनता और राष्ट्रीयता के विकास के लिए प्रामाणिक सिद्ध हुआ है। ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि इन कवियों ने मनुष्य को सामन्ती व्यवस्था की चार दीवारी से बाहर निकालकर व्यक्तिगत फलक पर लाकर खड़ा कर दिया। आधुनिक कवियों का प्रकृति की ओर उन्मुख होने का सबसे बड़ा कारण विज्ञान है। विज्ञान ने प्रकृति के रहस्यों को खोजने की चेष्टा की। विज्ञान ने यह भी सिद्ध कर दिया कि मनुष्य स्वयं प्रकृति के अन्तःसंघर्ष का परिणाम है। वह प्रकृति से पैदा हुआ है और उसका सर्वोतम विकास है। छायावादी कवि को प्रकृति से मिले नए आलोक के विषय में प्रसिद्ध आलोचक नामवर सिंह जी ने लिखा है **"प्रकृति दर्शन से छायावादी कवि को यह जो नया आलोक मिला, उसने सामान्य** रूप से उसकी सम्पूर्ण जीवन दृष्टि बदल दी और विशेष रूप से प्रकृतिसबंन्धी सौन्दर्य दृष्टि। उसे पहली बार प्रकृति की स्वतन्त्र सता का बोध हुआ।"[2]

आधुनिक प्रकृति चित्रण ने मानव को मध्यकालीन सामन्ती बन्धनों से मुक्त कर दिया। जयशंकर प्रसाद ने कामायनी के चिन्ता सर्ग में समुद्र के रौद्र रूप का चित्रण किया है। इस वर्णन के विषय में नामवर जी ने लिखा है— "सम्पूर्ण हिन्दी कविता में इससे पहले ऐसा चित्रण नहीं मिलता। समुद्र का वर्णन बेचारे रीतिकाल के कवि क्या करते? उन्हें घर की दीवारों तथा अरहर के खेतों से ही फुरसत न थी; फिर वे समुद्र कैसे देखते।"[3] स्पष्ट है कि मध्ययुगीन सामाजिक वातावरण बन्धन युक्त था, जिसमें कवियों को प्रकृति के स्वच्छन्द रूप का चित्रण करने में सफलता नहीं मिली। उन कवियों ने केवल प्राकृतिक वस्तुओं के नाम गिनाकर ही सन्तोष किया है। कामायनी के चिन्ता सर्ग में समुद्र के रौद्र रूप का चित्रण इस प्रकार हुआ है—

> **"उधर गरजती सिन्धु लहरियां**
> **कुटिल काल के जालों सी**
> **चली आ रही फेन उगलती**
> **फन फैलाए व्यालों सी।**
> **सबल तरंगाघातो से उस**
> **क्रुद्ध सिन्धु के, विचलित सी**
> **व्यस्त महाकच्छप सी धरणी**
> **उम–चूम थी करती सी।"**[4]

प्रसाद काव्य की बड़ी विशेषता यह है कि इनके काव्य में संयोग तो है परन्तु वह क्षणिक है, वह शीघ्र ही घोर विरह की चपेट में आ जाता है परन्तु यह संयोग और विरह दोनों वैयक्तिक नहीं है समूची प्रकृति इसमें भागीदार है। प्रसाद जी ने प्रकृति के विविध एन्द्रिय–बोध जगाने वाले दृश्यों का भी अंकन किया है। उस सौन्दर्य पर मुग्ध होकर प्रकृति भी सचेतन प्राणी की तरह विभिन्न व्यापारों से युक्त कल्पना करती है। प्रसाद जी ने रात्रि की मधुरता का निरूपण एक अभिसारिका नायिका के रूप में किया है जो प्रेमी से मिलने के लिए अत्यन्त व्यग्र एवं व्याकुल है।

> **"पगली हां सम्माल ले कैसे छूट पड़ा तेरा अंचल,**
> **देख बिखरती है मणिराजी अरी, उठा बेसुध चंचल।**
> **फटा था नील वसन क्या औ यौवन की मतवाली,**

एसोसिएट प्रोफेसर– हिन्दी विभाग, एस० एम० कालेज चन्दौसी– सम्भल, (उ०प्र०), भारत

अनुरूपी लेखक/संयुक्त लेखक

ASVP PIF-9.001 /ASVS Reg. No. AZM 561/2013-14

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-14, No.-III, Issues-21, YEAR- Sept.-2021

देख अकिंचन जगत लूटता तेरी छवि भोली भाली।"[5]

कामयनी में जहां एक ओर ऐसा कोमल और मधुर वर्णन मिलता है वही प्रकृति का भयंकर और रौद्र रूप के दर्शन भी होते हैं। प्रलयकानीन प्रकृति का रूद्र रूप कामायनी में अत्यन्त सशक्त रूप में चित्रित हुआ है।

"हाहाकार हुआ क्रन्दनमय कठिन कुलिश होते थे चूर,
हुए दिगन्त वधिर भीषण रव बार–बार होता था क्रूर
दिग्दाहों से धूम उठे या जलधर उठे क्षितिज तक के,
सघन गगन में भीम प्रकम्पन झंझा के चलते झटके।"[6]

यूं कामायनी में प्रकृति मानव की सहयोगिनी बनकर आयी है और काव्य की भी परन्तु जयशंकर प्रसाद को प्रकृति का कवि नहीं कहा जा सकता। वे मानवतावादी कवि थे। उनके काव्य में प्रकृति का जिस रूप में अंकन हुआ है उसमें भी मानव की अनुभूति और भावना का ही अंकन हुआ है। उन्होंने अपने काव्य में प्रकृति के प्रति अपना प्रेम नहीं दिखाया है बल्कि वे केवल उसकी रमणीयता का चित्रण करते हैं उनके काव्य में प्रकृति सम्बन्धी साधना इतनी सी है जितनी से वे उसके साथ तादात्मय स्थापित कर सकें। उनका दृष्टिकोण अंग्रेजी कवि वर्डसवर्थ से भिन्न था इस विषय में आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी जी ने लिखा है **"अंग्रेजी कवि वर्डसवर्थ की भान्ति प्रकृति के प्रति उनका निसर्ग सिद्ध तादात्मय नहीं देख पड़ता। प्रत्येक पुष्प में उन्हें वह प्रीति नहीं जो वर्डसवर्थ को थी। प्रत्येक पर्वत, प्रत्येक घाटी उनकी आत्मीय नहीं। वह प्रत्येक पक्षी को प्यार नहीं करते। उनका प्रेम रमणीयता से है, प्रकृति से नहीं। वे सुन्दरता में रमणीयता देखते हैं। इस सुन्दरता के सम्बन्ध में उनकी भावना रति की भी है और जिज्ञासा की भी।"**[7]

परन्तु यदि प्रसाद के प्रारम्भिक काव्य रचनाओं को देखा जाए तो ऐसा प्रतीत होता है कि उनका विकास प्रकृति को लेकर ही हुआ है। ब्रजभाषा में उन्होंने प्रकृति विषयक अनेक गीत लिखे, जो प्राचीनता के साथ–साथ नवीन दृष्टिकोण को भी अभिव्यक्त करते हैं। फिर भी उनमें वह तन्मयता नहीं है जो एक प्रकृतिवादी कवि में पाई जाती है। कामायनी में प्रकृति काव्य की सहयोगिनी बनकर आयी है। प्रसाद ने प्रकृति को मानवीकृत रूप में प्रस्तुत किया है। यहां प्रकृति पृष्ठभूमि का काम करती हुई वातावरण के अनुसार प्रस्तुत होती है। इसके प्रारम्भ में ही जलप्लावन और हिमगिरि का वर्णन है। इस विषय को संस्कृत साहित्य से जोड़ते हुए प्रेम शंकर ने लिखा है **"प्रकृति को आधार बनाकर कथा को आरम्भ की प्रणाली संस्कृत में प्रचलित है। कामायनी इस परम्परा में योग देती है। प्रसाद प्रकृति और मानव में एक तादात्मय स्थापित कर लेते हैं। इस कारण इनका प्रकृति चित्रण संश्लिष्ट योजना से पूर्ण रहता है।"**[8]

स्पष्ट है कि प्रसाद जी ने संस्कृत की परम्परा का निर्वहन करते हुए काव्य के आरम्भ में ही प्रकृति के साथ अपना तादात्मय बना लिया था। कामायनी महाकाव्य में प्रकृति चित्रण स्वतन्त्र रूप में अधिक नहीं हुआ है। उसमें प्रकृति और मनुष्य के कार्यव्यापारों को प्रायः एक साथ चलते हुए देखा जा सकता है। कामायनी में प्रकृति मनुष्य के साथ विचरण करते हुए दृष्टिगोचर होती है। आरम्भ से ही उसके चित्र मनु के व्यक्तित्व को साथ लेकर चलते हैं। हिमालय पर्वत पर फैले बर्फ की स्थूलता मनु के हृदय की भान्ति है और लम्बे–लम्बे देवदार के वृक्षों की तुलना तपस्वियों, सन्तों के साथ की गई है। प्रेमशंकर लिखते हैं, **"प्रकृति उसकी मर्म वेदना और करूणा विकल कहानी को सुन रही थी। प्रकृति की जड़ता में चेतनता का ही नहीं वरन् मानवीयता का आरोप भी प्रसाद ने किया है। वर्डसवर्थ अपनी प्रकृति से वार्तालाप करता है किन्तु कामायनी की प्रकृति मानव की सहचरी बनकर उसके प्रश्नों का उत्तर अपनी मौन भाषा में दे जाती है।"**[9]

कामायनी की यह विशेषता है कि उसमें स्थिति के अनुकूल प्रकृति का प्रयोग किया गया है। इसमें मनुष्य की जिज्ञासा सुन्दरता, मनोभावना का आभास प्रकृति के द्वारा प्राप्त होता है। मनु के भीतर (अन्तर्मन) में जिस जिज्ञासा की अभिव्यक्ति होती है वह प्रकृति की सम्पदा के रूप में होती है। कामायनी का प्रारम्भ और अन्त दोनों ही हिमालय की उपत्यका में होते हैं। जीवन की समग्रता, महानता का प्रतीक हिमालय भारतीय काव्य में युगों से वन्दनीय रहा है। साहित्य की इसी परम्परा का निर्वहन कामायनी महाकाव्य में भी किया गया है। इस महाकाव्य के भावमय स्थल प्रकृति के विभिन्न उपादनों से निर्मित है। प्रकृति का इतना उदात मानवीकरण शायद ही कहीं दृष्टिगोचर हो। जड़ और चेतन के समस्त भेंदों का टूट जाना और पाषाणी हिम सी ठण्डी प्रकृति का मांसल हो जाना आदि मानवीय रूप का उत्कृष्ट उदाहरण है–

"हो मन्त्र मुग्ध माया में,
मांसल सी आज हुई थी।
हिमवती प्रकृति पाषाणी, उस लास रास में विह्वल थी हंसती सी कल्याणी।"[10]

प्रसाद जी ने कभी भी प्रकृति को केवल प्रकृति के लिए चित्रित नहीं किया बल्कि उन्होंने प्रकृति का मानवीकरण करते हुए उसके अनेक भव्य और आकर्षक रूपों का चित्रण किया है। प्रलय की भीषणता का चित्रण करते हुए प्रसाद ने आकाश और पृथ्वी की कम्पन देखकर उसकी तुलना आलिंगन से कर दी। मनु कहता है कि उस समय (प्रलयकाल) इतना भयंकर स्वर निकल रहा था। जिसके कारण ऐसा प्रतीत हो रहा था कि मानों आकाश उस भयंकर स्वर में पृथ्वी को कांपता देखकर उसके आलिंगन के लिए अधीर होकर पृथ्वी की ओर झुका हो। निम्न

पंक्तियां इसका स्पष्ट उल्लेख करती है,

"बार–बार उस भीषण रव से कंपती धरती देख विशेष,
मानो नील व्योम उतरा हो आलिंगन के हेतु अशेष।।"[11]

एक ओर प्रलयकालीन प्रकृति के भीषण रूप का मानवीकरण करने वाले प्रसाद काम सर्ग में बसन्त के माध्यम से यौवन का निरूपण प्रतिकात्मक रूप करते हुए लिखते हैं–**"मधुमय बसन्त जीवन वन के वह अन्तरिक्ष की लहरों में, कब आये थे तुम चुपके से रजनी के पिछले पहरों में"[12]**

यहां पर कवि ने रति और काम की सरस रूपरेखा बसन्त के रागमयी और मधुमयी रूप में प्रस्तुत की है। कामायनी में मनु की अतृप्ति का ही संघर्ष है। इस संघर्ष में मन बुद्धि, प्रकृति, पुरुष, राजा–प्रजा का संघर्ष होता है। मनु स्वयं कहता है। **"आज शक्ति का खेल खेलने में आतुर नर प्रकृति संग संघर्ष निरन्तर अब कैसा डर।।"[13]**

मनु की साधना तथा चिन्तन प्रकृति के आंगन में, काम वासना प्रकृति में और मुक्ति भी प्रकृति के आंचल में ही दृष्टिगोचर होती है। इसी प्रकार प्रसाद ने कामायनी महाकाव्य में जो प्रकृति चित्रण किया है। उसके भीतर, कालगत, जातिगत और संस्कृतिगत विशेषताएं स्पष्टतः दृष्टिगोचर होती है। इस विषय में रमेशकुन्तल मेघ ने लिखा है–

"प्रकृति और सौन्दर्य, सौन्दर्य और प्रकृति तथा प्रकृति का सौन्दर्य कामायनी की कान्तिमान चेतना है। महाकाव्य में पुरुषविहीन अकेली प्रकृति है। भूतनाथ के ताण्डव अथवा जलप्लावन से त्रस्त प्रकृति है, विश्व सुन्दरी प्रकृति है। प्रकृति के माध्यम से प्रसाद ने सौन्दर्य तत्व का अपना परम भागवत रूप सिद्ध कर लिया है। यह प्रकृति प्रलय का और संस्कृति दोनों का अभियान करती है।"14 वस्तुतः कामायनी महाकाव्य के प्रकृति चित्रण एक ओर प्रकृति, वैभव मतवाली प्रकृति और रम्य नारी मूर्ति एवं सृष्टि का हास–परिहास, गान, नृत्य, लास आदि है तो वहीं दूसरी ओर अधीर (चन्चल) मन के उद्वेलन और व्याकुलता के रूप में हुआ है।निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि आधुनिक काल में विशेषकर छायावाद में कवि के वैयक्तिक विकास और सामाजिक स्वाधीनता की भावना एक ओर तो प्राचीन रूढ़ परम्पराओं के विरोध के कारण जाग्रत हुई और दुसरी ओर प्रकृति प्रेम के रूप में। साम्राज्यवादी शासन व्यवस्था के विरोध के लिए भारतीय जनमानस के भीतर स्वाधीनता की भावना जाग्रत करने के लिए इन कवियों ने प्रकृति चित्रण का सहारा लिया। उन्होंने पुराने रूढ़िवादी समाज की घूटन भरे माहौल से आधुनिक युवक को प्रकृति के खुले वातावरण में लाकर खड़ा कर दिया। जयशंकर प्रसाद की आरम्भिक रचनाओं को देखा जाए तो लगता है कि उनका विकास प्रकृति को लेकर ही हुआ है। कामायनीमें प्रसाद ने संस्कृत की परम्परा का निर्वहन करते हुए काव्य के आरम्भ में ही प्रकृति के साथ अपना तादात्मय बना लिया है। यह निर्विवाद है कि कामायनी में प्रकृति का चित्रण स्वतन्त्र रूप में नहीं हुआ है। इसमें स्थिति के अनुकूल प्रकृति का प्रयोग किया गया है। इस महाकाव्य में मनुष्य की जिज्ञासा, सुन्दरता मनोभावना का आभास प्रकृति के द्वारा ही प्राप्त होता है। इस काव्य के भावमय स्थल प्रकृति के विभिन्न उपादानों से निर्मित किए गए हैं। प्रकृति का इतना उदात मानवीकरण शायद ही कहीं दृष्टिगोचर हो।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. नामवर सिंह, छायावाद, नई दिल्ली : राजकमल प्रकाशन, 2015 (16वां संस्करण), पृ० 35.
2. वही, पृ० 39.
3. वही, पृ० 43.
4. डॉ० कृष्ण देव शर्मा एवं माया अग्रवाल, कामायनी एक विवेचन, दिल्ली : अनीता प्रकाशन, पृ० 87.
5. वही, पृ० 88.
6. डॉ० विमल शंकर नागर, प्रसाद की काव्य प्रतिभा, नई दिल्ली : संजय प्रकाशन, 2011, पृ० 212.
7. प्रेम शंकर, कामायनी का रचना संसार, दिल्ली : वाणी प्रकाशन, 2015, पृ० 114.
8. वही, पृ० 115.
9. वही, पृ० 115.
10. वही, पृ० 146.
11. डॉ० विमल शंकर नागर, प्रसाद की काव्य प्रतिभा, नई दिल्ली : संजय प्रकाशन, 2011, पृ० 218.
12. डॉ० कृष्ण देव शर्मा एवं माया अग्रवाल, कामायनी एक विवेचन, दिल्ली : अनीता प्रकाशन, पृ० 89.

*****